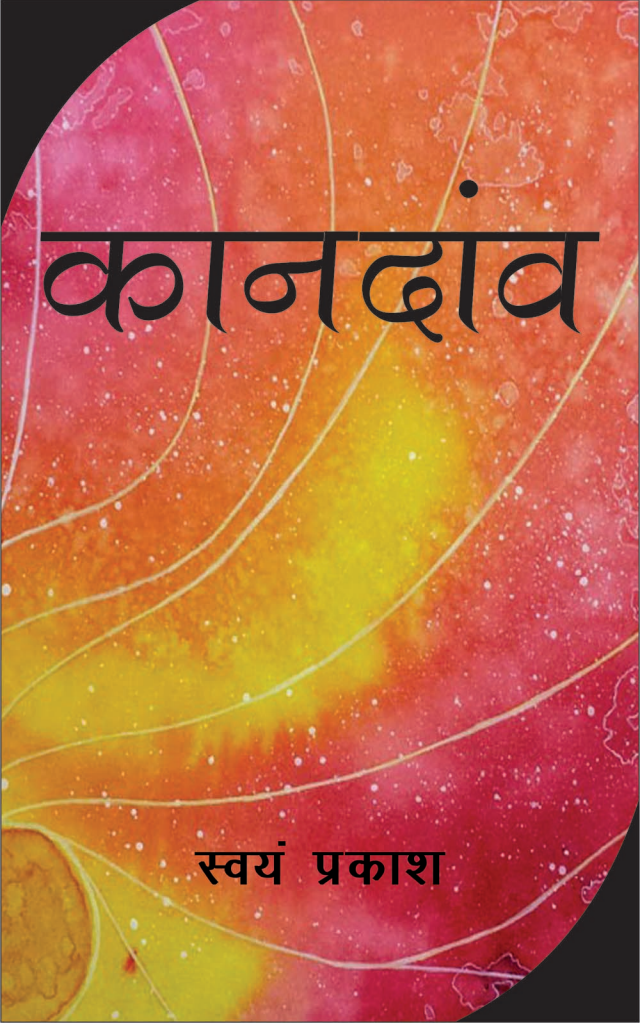

कानदांव

स्वयं प्रकाश

कानदांव

स्वयं प्रकाश

कहते हैं, किसी जमाने में कोयल कुहू-कुहू बोलती थी और पपीहा पीहू-पीहू। लोग पहली रोटी गाय के लिए निकालते थे और आखिरी कुत्ते के लिए। मुसलमान की बेटी की शादी हो तो हिन्दू कन्यादान लेकर जाते थे और हिंदू की बेटी की शादी हो तो मुसलमान जोड़ा लेकर। अब तो कहते हैं कोयल बोलती नहीं, बोलता है, और गाना उसे हम समझें तो हमारी मर्जी, है तो वह मेटिंग कॉल। सूचना का युग है। लोगों को यह तक नहीं मालूम की नारियल, सेब, केला और नींबू में से किसका वृक्ष कांटेदार होता है। सही जवाब बता सकने वाले नरपुंगव या नारीरत्न को मीडियापति प्रसन्न होकर हजारों रुपये का पुरस्कार देते हैं।

तो खैर बात उस जमाने की है जब कोयल कुहू-कुहू बोलती थी वगैरह।

कि एक था बनिया और एक था पठान। दोनों का साथ ऐसा जैसे घी-शक्कर, पर किसी बात पर हो गई दोनों में अनबन और अनबन भी ऐसी की मुँह पर तो मीठे-मीठे लेकिन अंदर-अंदर एक-दूसरे की खाल खींचने को उतावले। बनिये को अभिमान अपनी कुटिल बुद्धि का, तो पठान को नाज़ अपने बाजुओं के दमखम का। बढ़ते-बढ़ते जब बात ज़्यादा बढ़ गई तो दुआ-सलाम, रामा-श्यामा से भी गए। सरेराह गरेबान पकड़ने की नौबत आ गई। हो ये रहा था कि बनिया था गाँव का एकमात्र बोहरा-बजाज और पठान था हिसाब में कच्चा। रिवाज़ था कि साल भर सामान लेते जाओ और फसल पर दाम चुका दो।

बनिये-पठान की दोस्ती से जलकर किसी ने पठान में फूँक भर दी कि बनिया हिसाब में डंडी मार रहा है और तुझसे ऐसे कागजों पर टीप मंडवा रहा है कि जिनसे एक दिन तेरी सारी ज़मीन बनिये की हो जाएगी।
जब अदावत चल पड़ी तो छोटी-छोटी बातों ने भी आग में घी का काम किया। औरतों की कहा-सुनी, बच्चों के झगड़े-झंझट और तमाशबीनों की लगाई-बुझाई। करनी कुछ ऐसी हुई कि एक दिन सरेराह पठान ने बनिये का गरेबान पकड़ लिया और उसकी चटनी बनाने पर आमादा हो गया। देखते-देखते सारा गाँव इकट्ठा हो गया। सयानों ने बीचबचाव किया और सलाह दी कि शान्ति रखी जाए और जो भी मामला है, वह पंचायत को सुलटाने दिया जाए। रही चटनी, तो पठान जैसी कहे वे खुद पठान के घर पहुँचा देंगे। वैसे भी बनिये की चटनी में क्या स्वाद आएगा? सात-सात दिन नहाता तो है नहीं साला।

मान तो गया, पर पठान को पूरा शक था कि पंचायत बनिये के हक में ही फैसला करेंगी अब ऐसा क्या

किया जाए कि न बनिये को और न पंचायत को मौका मिले भांजी मारन का। तो उसने जुगत भिड़ाई कि ठीक है, पंचों का जो भी फैसला होगा सिर आँखें पर लूँगा, लेकिन फैसले की शर्त मैं खुद तय करूँगा। और शर्त ऐसी रखूँगा...

...और शर्त उसने ऐसी रखी कि सारा गाँव सन्न। और पंच तो जैसे पत्थर की मूरत। रही ऐसी ही गत थोड़ी देर। पठान की शर्त ये थी कि बातों से किसी को भरमाना तो मुझे आता नहीं पर सत्त और न्याव की परीक्षा ऐसी होनी चाहिए जो गाँव के सारे लोगों को ही नहीं, चिड़िया-चरोंटों को भी दिखाई दे। इसलिए करवा तो सबसे सामने एक दिन मेरी और बनिये की कुश्ती जो जीता वही सच्चा।

बुजुर्गों ने पठान को समझाने की कोशिश की कि गेलसफा जैसी बात मत कर। अब तुम लोग बच्चे तो हो नहीं कि कुश्ती से फैसला करा लें। सोचो, अच्छे लगोगे गाँव भर की बैयर-जनानियों-बहुओं-बेटियों के आगे लँगोट लगाकर खम ठोंकते?

पठान कुछ देर चुपचाप सुनता रहा। लगा कि समझ रहा है। उस ज़माने में फिल्मों का चलन तो था नहीं, लेकिन फिर पठान ने ठेठ आजकल की फिल्मों के अन्दाज़ में हवा में अपने बाजू उठाए और हुंकार भरी, ‘‘अब तो इस बात का फैसला कुश्ती के अखाड़े में ही होगा।’’ पठान की ललकार इतनी थिएटराना थी कि वहाँ जमा छोरों-छकारों ने इस बात पर तालियाँ पीट दीं। पीट क्या दीं, उनसे पिट गई। मुफ्त का इतना बड़ा तमाशा कौन छोड़े।

अब बनिये के मुँह में तो जैसे दही जम गया।

कुछ देर की अफरातफरी के बाद आखिर एक बुजुर्गों के भी बुजुर्ग ने फिर पठान को समझाने की कोशिश की, ‘‘रे पठान! इस तरह तो आज तक कोई फैसला नहीं हुआ है।’’

‘‘कैसे नहीं हुआ?’’ पठान बोला, ‘‘राजा फलान सिंह जी के ज़माने में नहीं हुआ था जब वजीरे-खजाना पर रानी के साथ बदफैली का इल्ज़ाम लगाया था सेनापति ने और बताऊँ?’’

‘‘बोलो?’’

‘‘राजा ढिकान सिंह जी के ज़माने में नहीं हुआ था, जब लोटन खवास और पीरू भिश्ती के बीच खेत में डंगर हाँकने की मसला आया था?’